पुराण

पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा कृतम्।
अनन्तरं च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गता।।

पुराण भारत का सच्चा इतिहास है। पुराणों से ही भारतीय जीवन का आदर्श, भारत की सभ्यता, संस्कृति तथा भारत के विद्या-वैभव के उत्कर्ष का वास्तविक दर्शन प्राप्त किया जा सकता है। पुराणों के द्वारा ही प्राचीन भारतीयता की झाँकी और प्राचीन समय में भारत के सर्वतोभावेन उत्कर्ष की झलक दृष्टिगोचर होती है। पुराणों में भारत की आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक उन्नति की सर्वोच्चता प्राप्त होती है। पुराण न केवल इतिहास हैं, अपितु उनमें विश्व-कल्याणकारी आधिभौतिक आदि त्रिविध उन्नति का मार्ग भी प्रदर्शित किया गया है। पुरातनकाल से भारतीय संस्कृति एवं धर्म के विषय में पुराणों का महत्त्व था। कारण, पुराण सनातन-धर्म के कल्याणमार्ग-रूप कर्म, उपासना तथा ज्ञान का उत्कृष्टता से उपस्थापन प्रस्तुत करते हैं। पुराण वेदों के गम्भीर एवं समाधिगम्य विषयों का विभिन्न भाव, भाषा, अलंकार तथा गाथाओं के द्वारा स्फुटीकरण करते हैं। वास्तव में पुराण वेदों के व्याख्यान-ग्रंथ हैं। अतः पुराण सर्वथा वेदानुकूल हैं। ये पुराण अकेले ही उनके समस्त अर्थों को सरल शब्दों में और कथानक शैली के द्वारा सुस्पष्ट कर देते हैं–**'इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।** (महा० आदि 1.267)

'पुराण' शब्द की व्युत्पत्ति पाणिनि, यास्क तथा स्वयं पुराणों ने प्रस्तुत की है। **पुराण** शब्द का अर्थ है–जो वृत्तान्त पहले हो गया हो, उसका वर्णन जिसमें हो वही **पुराण** है। **'पुरा अपि नवं पुराणम्'** से स्पष्ट है कि पुराना होने पर भी जो नवीन हो, वह **पुराण** है। **निरुक्तकार** व्याख्या करते हैं कि–**'पुराणमाख्यानं पुराणम्'** अर्थात् जिसमें प्राचीन आख्यान हों, वह **पुराण** है। **'वायुपुराण'** पुराण को स्पष्ट करते हुये कहते हैं–**'यस्मात् पुरा ह्यनतीदं पुराणं तेन तत् स्मृतम्'** (1.1.183) अर्थात् जो पूर्व में भी सजीव था, वह **पुराण** कहा गया है। **पद्मपुराण** के अनुसार–**पुरा परम्परां वष्टि पुराणं तेन तत् स्मृतम्** है। **ब्रह्माण्ड पुराण** ने **'पुरा एतत् अभूत्'** अर्थात् 'प्राचीन काल में ऐसा हुआ' कहकर **पुराण** शब्द को स्पष्ट किया है। इन समग्र व्युत्पत्तियों की मीमांसा करने से स्पष्ट है कि **'पुराण'** का वर्ण्य-विषय प्राचीन काल से सम्बद्ध था। प्राचीन ग्रंथों में पुराण का सम्बन्ध इतिहास से इतना घनिष्ठ है कि बहुशः दोनों का एकत्व 'इतिहास-पुराण' नाम से अनेक स्थानों पर उल्लिखित है।

भारतीय संस्कृति से सम्बद्ध सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान और कल्याणकारी क्रियाओं की जानकारी के लिये ये पुराण ही चिरकाल से आश्रयणीय रहे हैं। कृष्णद्वैपायन भगवान् वेदव्यास ने अथक परिश्रम से वेदों का शाखा-प्रशाखा, ब्राह्मण, कल्पसूत्र, निरुक्त आदि की प्रक्रियाओं में विभाजन करके भी जब पूर्ण लोकोपकार में सफलता नहीं देखी, तब उन्होंने ध्यानस्थ होकर भागवतादि पुराणों, महाभारतादि इतिहासों की रचना कर वेदों के गूढतम संदेश को जन-जन तक पहुँचाने का संकल्प किया। उन्हीं की भास्वती कृपा से समुद्भूत समग्र पुराण-राशि हमारे सामने उपस्थित होकर विश्वकल्याण में निरन्तर प्रवृत्त है। यह पुराण-वाङ्मय सूक्ष्म विचार करने पर वर्तमान समस्त विश्वसाहित्य की अपेक्षा सभी प्रकार शुद्ध, सभ्यभाषायुक्त, सुबोध, सारगर्भित कथाओं से युक्त और मधुरतम पदविन्यासों से समलंकृत है। इस प्रकार यह पुराण-साहित्य सभी मनुष्यों के हृदयों को आकृष्ट कर कल्याण करने के लिये निरन्तर तत्पर है।

पुराणों का रचना काल

पुराणों की रचना का कालनिर्णय एक विषम समस्या है, जिसका समाधान अत्यन्त कठिन है। इसका कारण अवान्तर शताब्दियों में पुराणों का संस्कार तथा प्रतिसंस्कार माना जाना चाहिए। क्योंकि पुराणों में समय-समय पर यत्र तत्र श्लोक ही नहीं अपितु पूरे अध्याय ही जोड़ दिये गये हैं। ऐसी स्थिति में पुराणों के मूल स्वरूप का समय-निर्धारण नितान्त असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है। वस्तुतः पुराणों का ही नहीं अपितु उनमें उल्लिखित श्लोकों का

भी पृथक्-रूपेण समय-निर्धारण पर विचार किया जाना चाहिये। अतएव पुराणों के समय-निर्धारण के सन्दर्भ में इदमित्थं रूप से कहना कठिन है। तथापि कतिपय सिद्धान्तों के द्वारा इस विवादित विषय का समाधान प्रस्तुत कर सकते है।

1. आवृत्त अंशवाले पुराण अनावृत्त अंश वाले पुराणों की अपेक्षा प्राचीनतर है। यथा विष्णुपुराण श्रीमद्भागवत की अपेक्षा प्राचीनतर सिद्ध होता है क्योंकि विष्णुपुराण के अनेक अध्याय तथा श्लोक मार्कण्डेय पुराण तथा हरिवंश पुराण में अपने उसी रूप में प्राप्त होते है। प्राकृत वैकृत रूप नव सर्गों के वर्णन वाले श्लोक दोनों में एक ही है। किन्तु श्रीमद्भागवत का कोई भी विशिष्ट अंश किसी भी पुराण में उपस्थित नहीं है। एवंच इस तथ्य को प्रतिपादित करने वाला अन्य प्रमाण भी स्पष्ट है कि श्रीमद्भागवत वैष्णव सम्प्रदायों के अन्तर्गत भागवत सम्प्रदाय का अपना विशिष्ट पुराण है। इसके विपरीत विष्णु पुराण किसी भी सम्प्रदाय के अन्तर्भुक्त न होकर सामान्यतः विष्णु-माहात्म्य का प्रतिपादक एक सर्वोच्च पुराण है, फलस्वरूप मध्यकालीन समग्र वैष्णव सम्प्रदायों का यह उपर्जाव्य ग्रन्थ रहा है। फलतः इन दोनों साक्ष्य पर दोनों (विष्णु एवं भागवत) पुराणों के कालनिर्णय का तारतम्य भलीभांति समझा जा सकता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर अर्थात् आवृत्त अध्यायों की अधिकता होने से ही वायु पुराण तथा ब्रह्माण्ड पुराण प्राचीन पुराणों में गिने जाते है।
2. पुराणों में निर्दिष्ट चरित्रों का तुलनात्मक समीक्षण भी उनके काल-निर्णय का एक साधन माना जा सकता है। यथा-भगवान् श्रीकृष्ण का चरित्र। मूल में तो यह चरित्र एकाकार ही है, परन्तु घटनाओं के विन्यास से इसका विकासक्रम भी अनुसन्धेय है। जिस पुराण में चरित्र का जितना कम विस्तार होगा वह उतना ही प्राचीन होगा। मान्यता यह है कि प्राचीन पुराणों में कृष्ण चरित्र की स्थूल कतिपय धटना ही उल्लिखित है किन्तु अवान्तर काल में श्रीकृष्ण के माहात्म्य तथा आकर्षण की वृद्धि होने से उस चरित्र में नवीन घटनाओं से युक्त करके पुष्ट किया गया है। यथा-विष्णु पुराण के पञ्चम अंश में श्रीकृष्ण का चरित्र मात्र 38 अध्यायों में वर्णित है। इसमें किसी प्रकार के अलंकृत करने का कार्य ग्रन्थकार के द्वारा नहीं किया गया। जबकि हरिवंश पुराण में नयी-नयी घटनाओं को जोड़कर उसको परिपुष्ट किया गया है। फलतः यहाँ उस चरित्र का विकास स्पष्टतः लक्षित होता है। तथा श्रीमद्भागवत में उस चरित्र में और भी नवीन घटनाओं को समाविष्ट करके उसको उत्कृष्टता प्रदान की गयी। विशेषतः गोपियों का प्रसंग, उद्धव एवं गोपी सम्वाद, आदि श्रीमद्भागवत की स्वनिर्मित विशिष्टता है। तथा इन तीनों ग्रंथों में श्रीराधा के चरित्र की सूक्ष्म सूचना होने पर भी उसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति नहीं है। यह अभिव्यक्ति ब्रह्मवैवर्तपुराण में सुस्पष्ट हो गयी है।

   इस प्रकार श्रीकृष्ण के चरित्र के विकास-क्रम का अनुसंधान करने पर इन चारों पुराणों का कालक्रम क्रमशः विष्णुपुराण, हरिवंशपुराण, श्रीमद्भागवतपुराण, तथा ब्रह्मवैवर्त पुराण के रूप में स्पष्ट होता है। अन्य प्रसिद्ध चरित्रों का अध्ययन काल-निर्धारण की प्रक्रिया में उपादेय माना जा सकता है।
3. पुराणों का अन्तरंग परीक्षण भी उनके समय-निर्धारण के लिये नियामक हो सकता है। यथा अग्निपुराण का काव्य विवेचन दण्डी के काव्यादर्श पर अधिकतर आश्रित है। फलतः उस अंश का दण्डी से उत्तरकालीन होना निश्चित है। गरुडपुराण ने कितने अध्यायों में याज्ञवल्क्य-स्मृति के आधार पर धर्मशास्त्रीय विषयों का विवरण प्रस्तुत किया है। फलतः यह भाग द्वितीय-तृतीय शती के अनन्तर का है, जब याज्ञवल्क्य-स्मृति का निर्माण हुआ।
4. बहिरंग साक्ष्यों के द्वारा भी पुराणों का समय सुनिश्चित किया जा सकता है। महाभारत में वायुपुराण का स्पष्ट उल्लेख वनपर्व में प्राप्त होता है। इसी प्रकार बाणभट्ट ने हर्षचरित में वायुपुराण के स्वरूप का तथा लोक-प्रचलित प्रवचन का भी उल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि हर्षचरित जिसका समय सप्तम शती का पूर्वार्ध है, तथा महाभारत जिसका समय लगभग द्वितीय शती है, से पूर्वकालीन होने के कारण वायुपुराण का समय द्वितीय शती से पूर्व ही मानना चाहिए।
5. कलि राजाओं के वृत्तवर्णन के आधार पर भी पुराणों का काल निर्देश किया जा सकता है। पार्जीटर ने इस विषय का तुलनात्मक अध्ययन कर भविष्यपुराण के कलिराजाओं के वृत्त को मूलभूत तथा प्राचीनतम माना है। इसी का उपबृंहण कालान्तर में मत्स्य, वायु तथा ब्राह्मण्ड के भविष्य वर्णन में अर्थात् कलियुग के शासकों के

विषय में उपलब्ध होता है। विष्णु तथा श्रीमद्भागवत में उपलब्ध यह विवरण भविष्य के आधार पर ही है, परन्तु अवान्तरकालीन संक्षिप्त विवरण है।

इन निर्णायक साधनों की सहायता से पुराणों का कालक्रम से विभाजन हो सकता है। पुराणों की तीन निम्न श्रेणियाँ हैं–

अ. प्राचीन प्रथम शती से लेकर 400 ईस्वी तक। इसके अन्तर्गत वायुपुराण, ब्रह्माण्ड-पुराण, मार्कण्डेय-पुराण, मत्स्य-पुराण तथा विष्णु-पुराण को रखते है।

ब. मध्यकालीन (500 ई.-900 ई.)–इस श्रेणी में हम श्रीमद्भागवत, कूर्मपुराण, स्कन्द पुराण, पद्मपुराण को रखते हैं।

स. अर्वाचीन समय (900 ई.-1000 ई.)–इस श्रेणी में हम ब्रह्मवैवर्त पुराण, ब्रह्मपुराण, लिंग पुराण आदि को रख सकते हैं।